शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अगस्त 2018
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

कृष्णा अग्निहोत्री की कहानियों में महानगरीय जीवन

ज्योति शर्मा (शोधार्थी)
डॉ. (श्रीमती) इला मिश्रा (निर्देशक)
व्याख्याता (हिन्दी विभाग)
महारानी श्री जया राजकीय महाविद्यालय
भरतपुर, राजस्थान, भारत

शोध संक्षेप

कृष्णा अग्निहोत्री ने अपनी कहानियों के माध्यम से हिन्दी कहानी में अनूठा नयापन उपस्थित किया है। संवेदना के स्तर पर उनकी कहानियाँ सांकेतिक हैं और परिवेश की दृष्टि से अंतर्राष्ट्रीय भावबोध का स्पर्श करती हैं। उनकी कहानियों में एक खास किस्म का अवसाद मिलता है। आज भीड़ में व्यक्ति स्वयं को अकेला महसूस करता है। सांकेतिकता के कारण उनकी कहानियाँ विशिष्ट बन गयीं। प्रस्तुत शोध पत्र में कृष्णा अग्निहोत्री की कहानियों में महानगरीय जीवन बोध पर विचार किया गया है।

प्रस्तावना

महानगर यंत्र, तकनीक, भीड़, अजनबीपन, यंत्रणा, संत्रास, संबंधों की औपचारिकता सभी को एक साथ समेटे हुए है। इस जिन्दगी में मानवीय संबंधों की अपेक्षा यांत्रिकता और भौतिकता हावी हो गयी है। कृष्णा जी ने अपनी कहानियों में आधुनिकता की दौड़ में तेजी से बदलते समाज, जीवन मूल्यों और उसके बीच संवेदनाओं और भावनाओं की कसमसाहट को आवाज प्रदान की है। आज के महानगरीय जीवन में आदमी के अकेलेपन की व्यथा को उन्होंने अपनी कहानियों में मुखर अभिव्यक्ति प्रदान की है तथा इस अभिव्यक्ति में उनके पात्र मध्यवर्ग से सम्बन्धित है। कृष्णा जी की इस संदर्भ से सम्बन्धित सभी कहानियाँ उस मोड़ का संकेत करती हैं, जहाँ महानगरीय जिंदगी ने मानवीय सम्बन्धों पर दबाव डालना शुरू कर संत्रास की स्थिति उत्पन्न कर दी है।

"महानगर की संस्कृति अमानवीकृत मूल्यों के रचाव की संस्कृति है। यहाँ एक ओर आधुनिकता के वरदानों और उपलब्धियों को कार्यान्वित करने की होड़ लगी है तो दूसरी ओर मानवीय संस्पर्श से धीरे-धीरे टूट जाने का मलाल भी है। एक विलक्षण अंतर्द्वन्द्व का सामना करता हुआ यहाँ का मनुष्य महानगर बोध की पीड़ा को वहन कर रहा है।"[1]

कृष्णा जी की कहानियों में महानगरीय जीवन

कृष्णा जी की कहानियों में महानगरीय जीवन के चरित्र कस्बाई तथा ग्राम संस्कृति में पले-बढ़े हैं। जब वे महानगरीय विद्रूपताओं से रूबरू होते हैं तो एक मानसिक अंतर्द्वन्द्व का सामना करना पड़ता है। जैसे 'रामकलिया' कहानी मध्यप्रदेश के आदिवासी जीवन की परम्परागत जीवन शैली तथा शहरी जीवन के हस्तक्षेप से आए बदलाव एवं विकृतियों को चित्रित करती है। कृष्णा जी ने

इसमें आदिवासी जीवन की स्वच्छंद यौनाचार, दरिद्रता, अंधविश्वास, जादू-टोना से लेकर एक आदिवासी स्त्री रामकलिया के एम.एल.ए. बन जाने की कथा को पिरोया है।

"मैंने गरीबी देखी है..... दुनिया में दुःख-सुख देखे हैं..... आपने हमें अपनी सेवा के लिए चुना है..... मैं आपकी सच्ची सेविका बनूँगी। देख लीजिएगा कि एक दिन में देश को मिटाकर रहूँगी..... मेरा मतलब है कि देश से गरीबी मिटाकर रहूँगी।"[2]

शहरी जीवन के हस्तक्षेप से रामकलिया अपने मुहल्ले की एम.एल.ए. चुनी जाती है। प्रगति की लंबी छलांग एवं महानगरीय जीवन के बढ़ते कदमों के बावजूद भारतीय समाज तथा भारतीय मानसिकता अभी भी नारी के प्रति मध्यकालीन सामंतीय दृष्टिकोण ही रखती है।

महानगरीय कार्यालयी संस्कृति में जहाँ सारा परिवेश ही यंत्रवत होता जा रहा है, उसमें किस प्रकार व्यक्ति अपनी पहचान खोजने के लिए भटकता रहता है। इसी भटकाव तथा अजनबीपन का चित्रण कृष्णा जी की महानगरीय बोध की कहानियों का मूल स्वर है। 'यह क्या जगह है दोस्तों' कहानी में महानगरीय परिवेश की क्रूर, स्वार्थी, अजनबीपन से भरी महानगरीय चेतना की अभिव्यक्ति है। 'यह क्या जगह है दोस्तों' की 'ऋतु' के पास न पति है, न प्रेमी है, न बच्चे हैं। ऋतु प्रेमी की ऐय्याशियों को ढोती रही है। पति की मृत्यु के बाद उसके मूवी देखने या संगीत सुनने का रियाज़ करने, रेडियो प्रोग्राम देखने या फोन करने, किसी शादी-विवाह में जाने तक पर पाबंदी लगा देते हैं। यहाँ तक कि उसके साज़ बेचकर कम्प्यूटर खरीदने के लिए कहते हैं। एक दिन ऋतु अपने पूर्व प्रेमी राजेन्द्र से मिलने उनके घर जाती है और कहती है - "अब तो अकेलेपन की पीड़ा समझो। जानते हो न। शायद अनुभव भी करते ही होंगे कि अकेलापन कितनी बड़ी त्रासदी है।"[3]

आज महानगरों में रहने वाले मनुष्य जीवन की विसंगतियों से पीड़ित हैं और अपने अस्तित्व को बचाये रखने की भरसक कोशिश करते हैं। 'छोटा सा सोच' कहानी बड़े शहरों की कालोनियों के बाशिंदों की संकीर्ण सोच की कहानी है। क्यों लोग अपने तक ही सीमित हैं ? क्यों नहीं अपने परिवेश अपने आस-पास, अपने पड़ोसियों के बारे में सोचते हैं ? आज माल सभ्यता से ग्रस्त लोग अपने में सिमटे हैं। किसी अन्य से उन्हें कोई मतलब नहीं, कोई मरे, गिरे, रोए, कलपे वे खाली आँखों व दिमाग से अपने-अपने गेट पर खड़े जुगाली करते हैं। कालोनी की महिलाएँ एक-दूसरे की बुराई करने, साड़ी और जेवरों की तारीफ करने में अपनी शान समझती हैं। यही महिलाएँ सोमवार को सफेद, मंगलवार को लाल, बुधवार को हरे, गुरुवार को पीले रंगों के आस-पास मंडराती नजर आती हैं। हर उत्सव हर त्यौहार उत्साह से मानने वाले लोग केवल सुबह-शाम भजन के कैसेट ओर्केस्ट्रा आदि में डूब कर खुश हो जाते हैं। हर कालोनी की यही समस्या है। इसमें भी पेपर में फोटों छपने में कोई गर्व महसूस करता है तो किसी को ईर्ष्या होती है। कृष्णा जी कहानी के अंत में शिक्षक द्वारा यही संदेश देती हैं कि - "हे भगवान! इनको सदबुद्धि व छोटा सा सोच तो दो ताकि एकता, अन्याय, गलत, सही समझे।"[4]

महानगरीय जीवन के कारण लोग एकाकी जीवन जी रहे हैं। आपसी मेल-जोल अब दूर होता जा रहा है। लोग अपने दैनिक क्रियाकलापों में इतना डूब गये हैं कि उनके आस-पास क्या हो रहा है उसकी उन्हें कोई चिंता नहीं है।

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 अगस्त 2018
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

महानगरीय जीवन में नई पीढ़ी व पुरानी पीढ़ी के बीच इतना अन्तर आ गया है कि नई पीढ़ी से पुरानी पीढ़ी किस तरह निराश हो चुकी है कि इसका प्रमाण 'मम्मी मैं बोर हो रही हूँ' कहानी में दिखाई देता है। जिसमें पचासी वर्षीय वृद्ध अवस्थी जी को यह फिक्र है कि उनकी मृत्यु के पश्चात् उनकी पत्नी सुशीला की देखभाल कौन करेगा। "सो मुझे तो यही चिंता है कि मेरी मृत्यु यदि पहले हुई तो ये अकेले कैसे रहेगी। बुढ़ापे में तो मैं ही इसकी अधिक रेखरेख करता हूँ।"[5] अवस्थी जी व सुशीला के चार बच्चों के होते हुए भी वह दोनों अकेलेपन की त्रासदी को भोग रहे थे। महानगरीय संत्रास ने किस सीमा तक मध्यवर्ग को तोड़ दिया है, झिंझोड़ दिया है और टूटकर मनुष्य किस तरह जीवन की विडम्बनाओं व यातनामूलक असंगतियों को विवश भाव से सहता हुआ भी जीने की ललक लिए हुए एक संक्रमण के दौर से गुजर रहा है, यही सब कृष्णा जी की कहानियों की आत्मा में आन्दोलित-उद्वेलित होता हुआ दिखाई पड़ता है।

महानगरीय संस्कृति से उत्पन्न यातनापूर्ण संत्रास, आत्म-निर्वसन आदि मनःस्थितियों को कृष्णा जी ने अपनी कहानियों के माध्यम से अत्यंत ही कुशलता से उजागर किया है। मानव स्थितियाँ चूँकि परिवेशगत संदर्भों की देन होती है, अतः कहानीकारों ने इसी परिवेश के यथार्थ संदर्भ की नब्ज़ पर अपने हाथ रखे, जो आधुनिक जीवन की विडम्बना और नियति है। कृष्णा जी चूँकि मानवीय संवेदना की कहानीकार हैं, अतः उन्होंने भी परिवेश के महानगरीय पक्ष को अपनी कहानियों में उभारकर उसे आम आदमी से संदर्भित किया है। कृष्णा जी की कुछ कहानियों में व्यक्ति और समाज के रिश्ते मानवीय धरातल से उखड़कर यांत्रिक स्तर पर उभरे हैं।

निष्कर्ष

कृष्णा जी ने अपनी कहानियों में महानगरीय जीवन व उससे जुड़ी समस्याओं का चित्रण किया है। उन्होंने युगीन अन्तर्विरोध, विसंगतियों ओर रूढ़िवादी परम्पराओं विषैली व्यवस्था के विरूद्ध विरोध को चित्रित किया है। साथ ही कृष्णा जी ने अपने अनुभव व समाज दर्शन को भी अपनी कहानियों की समस्याओं में चित्रित किया है। इसमें उन्होंने अलगाववाद, व्यक्ति, स्वातन्त्र्य, गाँवों से पलायन, नगरीकरण, तकनीकीकरण, शिक्षा का अवमूल्यन, गुरुशिष्य के बदलते संबंध, बेरोजगारी, पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण, भ्रष्टाचार, महानगरों में पनपते अपराध आदि समस्याओं का उल्लेख किया है। कृष्णा अग्निहोत्री जी ने कथा-साहित्य में लम्बा सफर तय किया है और हर बार बहुत कुछ नया लिखा है। उनकी कहानियाँ सम्मोहन नहीं रचती बल्कि गहरा दंश दे जाती हैं और पाठक तिलमिला जाता है। हर कहानी में तेज हवा का क्रोध है और निर्वासन का संत्रास भी है। प्रचलित मुहावरों में कहा जाये-तो कहानियाँ भोगे यथार्थ की पगडंडियाँ हैं, जहाँ काँटे भी हैं, तो कहीं सांत्वना की हरी दूब भी।

संदर्भ ग्रंथ

1. *डॉ. भगवान वर्मा, सं. डॉ. साधना शाह- 'नयी कहानी के तीन आयाम', पृष्ठ 149*
2. *कृष्णा अग्निहोत्री, (कठौती कहानी समग्र भाग द्वितीय) 'रामकलिया' पृष्ठ 98*
3. *कृष्णा अग्निहोत्री, (कठौती कहानी समग्र भाग तृतीय) 'यह क्या जगह है दोस्तों' पृष्ठ 289*
4. *कृष्णा अग्निहोत्री, (कठौती कहानी समग्र भाग तृतीय) 'छोटा सा सोच' पृष्ठ 568*
5. *कृष्णा अग्निहोत्री, (कठौती कहानी समग्र भाग तृतीय) 'मम्मी मैं बोर हो रही हूं', पृष्ठ 391*